पंच समिति

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

समिति और गुप्तिरूप अष्ट प्रवचन माताएं हैं। समितियां पांच और गुप्तियां तीन कही गयी हैं। जिस तरह माता अपने पुत्र की सदैव देखभाल करती है, उसे सदा सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है, उन्मार्ग पर जाने से रोकती है, बालक के रक्षण और चारित्र निर्माण का सतत ध्यान रखती है, उसी प्रकार से आठों प्रवचन माताएं भी प्रत्येक प्रवृत्त करते समय साधक की देखभाल करती हैं, सतत उपयोगपूर्वक सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती हैं, असत् प्रवृत्ति में जाने से रोकती हैं, साधक की आत्मा का दुष्प्रवृत्तियों से रक्षण तथा उसके चारित्र के विकास का ध्यान रखती हैं। इन आठों में समस्त द्वादशांगरूप प्रवचन समा जाता है, इसलिए इन्हें 'प्रवचनमाता' कहा गया है।

जैन साधुओं के आचार में पांच समितियों का स्थान प्रमुख है। इनकी सभी क्रियायें समितियों के अनुसार ही होती हैं। श्रमण का चलना, उठना, बैठना, आहार ग्रहण करना आदि क्रियायें प्रमाद रहित यत्नाचार पूर्वक होती हैं। समिति में सम्यक्त्व पर अधिक बल दिया गया है। मन की एकाग्रता, विशुद्धता, संयम की दृढ़ता एवं चारित्रिक विकास हेतु समितियों का आचरण आवश्यक है। साधु को जीवन यात्रा के लिए पांच आवश्यक क्रियायें करनी पड़ती हैं। समिति के पांच भेद हैं– ईर्या समिति, भाषा समिति, एषणा समिति, आदान निक्षेपण समिति और व्युत्सर्ग समिति।

जाने–आने की क्रिया को ईर्या कहते हैं। श्रमणों के आने–जाने की क्रियायें समिति पूर्वक होती हैं। प्रयोजन के निमित्त चार हाथ आगे जमीन, देखकर साधु के द्वारा दिवस में प्रासुकमार्ग से जीवों का परिहार करते हुये गमनागमन करना ईर्या समिति है। ईर्या समिति का आलम्बन– ज्ञान, दर्शन और चारित्र है। इन्हीं के उद्देश्य से ही वह गमन करे। काल को दृष्टि में रखकर ही उसे चलना चाहिए। सूर्य के प्रकाश में ही गमन करे।

भाषा विषयक संयम को भाषा समिति कहते हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, भय, वाचालता, और विकथा इन आठ दोषों से रहित तथा आवश्यकता होने पर भाषण में प्रवृत्त होना भाषा समिति है। हित, मित और असंदिग्ध वचन बोलने को भाषा समिति कहा है। किसी को मेरे वचन से पीड़ा न पहुंचे, इस उद्देश्य से पैशुन्य, हास्य, कर्कश, पर–निन्दा, आत्मप्रशंसा तथा रागद्वेषवर्धक विकथाओं आदि का त्याग करके स्व पर हितकारी वचन बोलना भाषा समिति है। उद्गमादि दोष रहित आहार ग्रहण करना एषणा समिति है। एषणा शब्द के अन्तर्गत गवेषणैषणा– आहार के शुद्धाशुद्ध होने की अन्वेषणा, ग्रहणैषणा––आहार ग्रहण करते समय दोष–अदोष का निरीक्षण और परिभोगैषणा–आहार का सेवन करते समय दोषादोष का विचार, इन तीनों का समावेश हो जाता है। भिक्षु अहिंसा महाव्रत की सुरक्षा के लिए न तो पचन–पाचनादि क्रिया करता है और न किसी से खरीद या खरीदवाकर आहार ले सकता है, तथा न किसी से अपने निवास स्थान में आहार मंगवा सकता है, अतः पिण्डैषणा की शुद्धि के लिए भिक्षाचर्या का मार्ग ही सर्वोत्तम है। इनकी भिक्षा 'सर्वसम्पत्करी भिक्षा' मानी गयी है। सर्वसम्पत्करी भिक्षा वह भिक्षा है, जिसे त्यागी व आत्मध्यानी व्यक्ति अहिंसा व संयम की दृष्टि से सहज प्राप्त करता है।

सभी प्रकार के धर्मोपकरण– वस्त्र, पात्र, पुस्तक और भाण्ड आदि को विवेक पूर्वक ग्रहण करना और जीव रहित प्रमार्जित भूमि पर निक्षेपण आदान निक्षेपणा समिति है। श्रमण को प्रत्येक वस्तु याचित प्राप्त होती है। उसका पूर्ण उपयोग करना उनका कर्त्तव्य है। वस्तु को ग्रहण करने में, रखने में अहिंसा की दृष्टि प्रमुख है। श्रमण के पास जो भी धार्मिक उपकरण हैं उन्हें अच्छी तरह से देखकर और उन्हें प्रमार्जन करके उठाना और रखना चाहिए, जिससे किसी जीव की हिंसा न हो। ज्ञान का उपकरण, संयम का उपकरण, शौच का उपकरण, अथवा अन्य उपकरणों को ग्रहण करना, रखना आदान निक्षेपण समिति है।

जीवों के अविरोध से देह के मल का निर्हरण करना उत्सर्ग समिति है, अर्थात् जहां पर स्थावर या त्रस जीवों की विराधना न हो ऐसे निर्जन्तु स्थान में मलमूत्र आदि का विसर्जन करना उत्सर्ग समिति है। जो साधु या साध्वी अस्वस्थ होने के कारण स्थिरवास कर रहा हो, या उपाश्रयादि में रह रहा हो, अथवा ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ उपाश्रय में आकर ठहरा हो,

उस प्रज्ञावान् साधु को चाहिए कि वह पहले ही उसके परिपार्श्व में उच्चार–प्रसवण–विसर्जन की भूमि को अच्छी तरह देखभाल कर ले। जो साधु या साध्वी ऐसा नहीं करता उसे स्व–पर विराधना की महाहानि का दुष्परिणाम देखना पड़ता है।

इन पांचों समितियों का सदा पालन करने वाला मुनि छः प्रकार के जीवों के समूह से भरे हुए लोक में गमनागमन करता हुआ हिंसा से लिप्त नहीं होता, क्योंकि समितियों में प्रवृत्त करते हुए मुनि प्रमाद से रहित होता है। जीवों की हिंसा से बचने के उपायों को न जानने वाला जिस क्षेत्र में विचरण करता है, जीवों की हिंसा से बचने के उपायों को जाननेवाला भी उसी क्षेत्र में विचरण करता है। तथापि वह ज्ञान और चारित्र में बालक के समान अज्ञ हो पाप से बधता है, किन्तु उपायों को जाननेवाला पाप से लिप्त नहीं होता और पूर्व में बांधे हुए कर्म की निर्जरा करता है। आत्मशुद्धि के लिए समिति का विधान किया गया है। समिति पूर्वक कार्य करने से कर्मों का निरोध हो जाता है।